अक्षय तृतीया अर्थात् परशुराम जयन्ती

ज्योतिषीय शुभ मुहूर्त काल के चार स्वयं सिद्ध अर्थात् अबूझ दिन हैं। शुभ कर्म, संस्कार आदि किसी भी सतकर्म का श्री गणेश इस दिनों में किया जा सकता है। इनमें तिथि, नक्षत्र, योग, ग्रह बलाबल, होरा आदि देखने की आवश्यकता नहीं होती है, न ही इनमें राहुकाल, गुलिक, अशुभ ग्रह गोचर का बोध होता है। अभिजित् स्वयं सिद्ध यह मुहूर्त हैं - गुडी पड़वा अर्थात् चैत्र शुक्ल की प्रतिपदा, दशहरा, दीपावली के पूर्व की प्रदोष तिथि और आखातीज अर्थात् वैशाख मास के शुक्ल पक्ष की तृतीया। पौराणिक मान्यता के अनुसार त्रेतायुग का आरम्भ इसी दिन से हुआ है। इसलिए इस तिथि को युगादितिथि भी कहते हैं। भविष्य पुराण के अनुसार इस दिन किए गए स्नान, ध्यान, तप, दान, पुण्य आदि कर्म अनन्त फल देने वाले होते हैं। इस दिन किए गए थोड़े अथवा अधिक कर्मों का फल अक्षय माना जाता है। सतकर्मों के नाश न होने तथा अनन्त फल देने वाली तिथि होने के कारण इस तिथि को अक्षय तिथि अथवा अक्षया तिथि भी कहते हैं। तिथि की शुभता और महत्व का अनुमान इस बात से भी लगाया जा सकता है कि वृन्दावन में श्री बिहारी जी के श्री चरणों के दर्शन वर्ष में एक बार इसी तिथि को ही किए जाते हैं। चार धामों में से एक श्री बद्रीनारायण धाम के कपाट भी अक्षय तृतीया को ही खुलते हैं।

इस धार्मिक पर्व के पीछे हमें तात्कालीन अर्थ व्यवस्था की झलक भी मिलती है। उस समय लोग बिना किसी कानूनी व्यवस्था और बन्धन केवल और केवल धार्मिक प्रवृत्ति के अन्तर्गत प्रेरित होकर अन्न और जल जैसी मुख्य समस्याओं का स्वयं ही अपनी भूख के संयम से समाधान कर लेते थे। आधा वैशाख समाप्त होते ही गर्मी अपनी चरम सीमा पर आ पहुँचती है। लोग निःस्वार्थ पानी से तड़पते लोगों के लिए प्याऊ लगवाते थे। गुड़, चना और सत्तू का दान करते थे। सेवाभाव से किए गए इन कृत्यों के पीछे देखा जाए तो मौसम के अनुरुप औषधीय गुणों का भी समावेश है। चिकित्सक भी इस तथ्य को स्वीकार करते हैं। सारांश में देखा जाए तो यह तिथि हमें त्याग और परोपकार का पाठ पढ़ाती है। मत्स्यपुराण, नारदीय पुराण,

भविष्य पुराण, विष्णु धर्म सूत्र, मुहूर्त चिन्तामणि आदि ग्रंथों में इस का विस्तृत विवरण मिलता है। हिन्दू धर्म में इस तिथि में की जाने वाली अनेक कथाएं और व्रत मिलते हैं। सनातन धर्मावलम्बी इस पर्व को पूरे उत्साह से मनाते हैं। पर्व में रस की खीर से बना व्यंजन, खरबूज़, तरबूज़, मोदक आदि के भोग और दान का विशेष रुप से चलन है।

धरती पर जब किसी पुण्य आत्मा का अवतरण होता है तो वह घड़ी कोई साधारण घड़ी नहीं होती। ऐसी ही शुभ घड़ी अक्षय तृतीया को धर्म रक्षक और धर्म संस्थापक भगवान परशुराम का जन्म हुआ था। अक्षय तृतीय पर्व परशुराम जयन्ती के रुप में भी मनाया जाता है। इस कारण से इस तिथि का शाश्वत महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है।

त्रेता युग में भगवान वंश के महर्षि जमदग्नि के पांच पुत्रों में परशुराम सबसे छोटे थे। इनका प्रारम्भिक नाम राम था। इनकी मॉ का नाम रेणुका था। वह इक्ष्वाकु वंशी एक राजपुत्री थीं। शास्त्रविद्या की शिक्षा-दीक्षा उन्होंने गुरु द्रोणाचार्य से ली थी। असम राज्य की उत्तरी-पूर्वी सीमा में जहॉ ब्रह्मपुत्र नदी भारत में प्रवेश करती है, वहॉ परशुराम कुण्ड है। केरल और कोंकण में उनके अनेक प्रसिद्ध मन्दिर हैं। शिव की कठोर साधना के बाद उन्होंने आर्शीवाद सहित परशु प्राप्त किया था। इसलिए ही कालान्तर में वह परशुराम नाम से चर्चित हुए।

परशुराम से पूर्व हैद्रय वंशीय क्षत्रिय शाशकों ने ब्राह्मण, संत, महात्माओं और निरीह जन समाज में अपनी क्रूरता का आतंक फैला रखा था। हैद्रय वंशी क्षत्रिय शासकों ने उस समय अपनी स्वेच्छा चारिता अपना रखी थी। उस काल में जघन्य अपराध बढ़ गए थे, स्त्रियों के शीलभंग पर कोई अंकुश नहीं रह गया था। गौउएं तक सुरक्षित नहीं थीं। हर ओर अधर्म और अराजकता व्याप्त हो रही थी। धर्म साहित्य नष्ट किए जा रहे थे। हिन्दुत्व की रक्षा के लिए जो कोई भी सिर उठाता था उसका वध कर दिया जाता था। तात्कालीन भृगु वंशज जब भी उन क्रूर, दम्भी और शासन के मद में चूर शासकों को समझाने का यत्न करते तो उन्हें प्रताड़ित किया जाता, प्राण दण्ड दे दिया जाता था। भृगु वंशजों के राजपुरोहितों की बात का कोई अस्तित्व ही नहीं रह गया था। अत्याचारों से तंग आकर अन्ततः जो पुरोहित जान की रक्षा कर सके वह सरस्वती के तट पर जा बसे। उन्हीं विस्थापितों में एक बालक राम भी थे। बालपन के आक्रोश और अत्याचार का पारावार अन्ततः उनके क्रोध के रुप में उजागर हुआ। उन्होंने विदेशी आक्रांता, जो कि भारत में क्षत्रिय शासक बन गए थे और भारतीय संस्कृति में पूज्य ब्राह्मण और गऊओं को सताने लगे थे, केवल उन्हीं का संहार करके तात्कालीन आंक्रात समाज को उनके भय, नीच और क्रूर कर्मों से मुक्त करवाया। त्रेता युग में उन दुष्ट और दुराचारी राजाओं से 21 बार युद्ध में पृथ्वी को छीनकर राम राज्य की स्थापना की भूमिका रखी। इस प्रकार उस समय के

क्रूर राजा कार्त वीर्य सहस्त्रार्जुन को मारकर अपने पिता पर हुए अत्याचारों और उनके वध का भी बदला ले लिया। क्षत्रियों पर उनके क्रोध और सशस्त्र अभियान को लेकर जब लोग उनको समझाते थे तो वह कहते थे, ''क्रोध वह अनुचित है तो स्वार्थ और अहंकारवश किया जाए। अन्याय के विरुद्ध क्रुद्ध होना अथवा उसका संहारक बनना नीतिपरक है तथा मानवता के विपरीत तो कदापि् नहीं है।''

जनक के दरबार में जब एक बार परशुराम का सामना राजकुमार राम से हुआ तो उन्होंने अपनी प्रज्ञाशक्ति से तुरन्त समझ लिया कि वह विष्णु के अवतार हैं। उनके समक्ष उन्होंने अपने आपको तत्काल समर्पित कर दिया और मान लिया कि अन्याय के विरुद्ध चल रहा उनका अभियान अब समाप्त हो गया है। राम ने उन्हें समझाया कि उनका अन्याय, क्रोध वस्तुतः धर्मसम्मत ही था। परन्तु महर्षि मर्यादा के यह कृत्य अनुकूल नहीं है। प्राश्चित स्वरुप राम जी के समझाने पर वह हिमालय पर्वत में गुप्त वास में चले गए, उनको फिर किसी ने नहीं देखा। परन्तु मान्यता यह है कि उन्होंने अपना जीवन त्याग, तपस्या तथा फल-फूल और वनोषधियों के शोधपरक कार्यों में लगा दिया। ऋषियों के अनुसार उनका बसाया हुआ नन्दनकानन वन आज भी फूलों की घाटी के नाम से प्रसिद्ध है। जो भी जीती जागती फूलों की उस घाटी को आज देखेगा वह स्वीकार करेगा कि यह कभी अतिविकसित और सुनियोजित वन किसी दिव्य पुरुष की चमत्कारिक देन है। उनका मूल वाक्य था कि धर्म की रक्षा नम्रता और दुष्टों के प्रतिरोध तथा दण्ड से ही की जा सकती है।

आज उन्हें भगवान के रुप में पूजा जाता है। मान्यता है कि वह सप्त चिरंजीवी (हनुमान, व्यास, बलि, अश्वत्थामा, विभीषण, कृपाचार्य और परशुराम) में से एक हैं जो सशरीर आज भी कहीं मूर्त रुप में प्रकट हो सकते हैं। उनके ध्यान, मनन और पूजन से आयुष्य की प्राप्ति होती है।

भगवान परशुराम का जप मंत्र है -

रामः परशुहस्तश्च कार्तवीर्यभयापहः।
रेणकादुः खशोकध्नो विशोकः शोकनाशकः।।